लखनऊ के इमामबाड़े

जनाब मोहम्मद इस्हाक़ सिद्दीक़ी साहब, लखनऊ
अनुवादकः बिन्ते ज़हरा नक़वी ''नदल हिन्दी'' लखनऊ

लखनऊ उन शहरों में से है जिनकी अपनी अलग एक पहचान है। शाही ज़माने के पर्यटक लखनऊ को बाग़ों का शहर कहते थे। वह लखनऊ के इमामबाड़ों और मोहर्रम की तारीफ़ करते थे। बाग़ तो बाक़ी न रहे, मगर इमामबाड़े बाक़ी हैं। इसलिए अगर लखनऊ को इमामबाड़ों का शहर कहा जाए तो ठीक होगा।

शाही ज़माने में लखनऊ का शायद ही कोई ऐसा मोहल्ला हो जहाँ दो-चार मशहूर इमामबाड़े न हों, लेकिन उनमें बहुत से 1857ई० के आज़ादी के संग्राम में शहीद हो गए। जो बच रहे उनके देखने से अंदाज़ा होता है कि अवध के नवाबों को अज़ादारी से कितना लगाव था। इस्लामी निर्माण-कला में मस्जिदों और मक़बरों के बाद इमामबाड़ों की एक अहम जगह है और यह बढ़त अवध के नवाबों के मज़हब से जुड़े होने और सरपरस्ती का नतीजा है।

अगर इमामबाड़ों की ख़ूबसूरती और रौनक़ को देखना है तो मोहर्रम में देखिये। साल के ग्यारह महीने तो उनके आराम का ज़माना है। मोहर्रम का चाँद देखते ही वह जाग पड़ते हैं। जिसने मोहर्रम में बड़े इमामबाड़े, छोटे इमामबाड़े और शाह नजफ़ की रौशनी देखी है, मोम की ज़रीह और ताज़ियों के शानदार जुलूस देखे हैं वह मोहर्रम की तहज़ीब कल्चर और उससे जुड़ी अहमियत और फ़ायदों का अंदाज़ा कर सकता है। (यह जुलूस जिनमें शाही ज़माने की अज़ादारी की हल्की सी झलक नज़र आ जाती थी 1977 से बंद हैं।)

लखनऊ के मोहर्रम का मुक़ाबला अगर किसी त्योहार से किया जा सकता है तो वह मैसूर का दशहरा है। दोनों की बुनियाद हक़ व बातिल, सत्य-असत्य और धर्म-अधर्म की जंग पर है। दशहरे का समापन ''विजय दशमी'' पर होता है और मोहर्रम का अशरे पर। दोनों दस दिन मनाए जाते हैं। राम (भलाई के पुतले), रावण (बुराई और फ़साद का पुतला) पर जीतते हैं और इमाम हुसैन यज़ीद की फ़ौज का मुक़ाबला करते हुए शहीद होकर खुली हुई कामयाबी लेते हैं। शाही ज़माने में लखनऊ की अज़ादारी में हिन्दू-मुसलमान बराबर के साझी थे। शायाद इसकी वजह इतिहास के दो अहम वाक़िओं का एक तरह होना और एक ही तरह का अंजाम था यानी बुराई पर अच्छाई की जीत।

इमामबाड़ा उस बिल्डिंग को कहते हैं जो अज़ादारी के लिए ख़ास हो लेकिन यह ज़रूरी नहीं कि अज़ादारी के लिए इमामबाड़ा बनाया ही जाए। एक ग़रीब आदमी तख़्त या चौकी पर चाँदनी बिछाकर ताज़िया रख सकता है। दीवार की अलमारी या ताक़ में छोटा सा ताज़िया सजा सकता है। अगर मकान में कई कमरे हों तो एक कमरा ताज़िये के लिए अलग किया जा सकता है जैसे उत्तर भारत में ''ताज़िया ख़ाना'' और दक्षिण में ''आशूर ख़ाना'' और ''इमाम बारगाह'' कहते हैं। जो बिल्डिंग अज़ादारी के लिए वक़्फ़ हो उसे ईरान में ''हुसैनिया'' कहा जाता है, गंगा-जमुनी तहज़ीब वाले लखनऊ के लोगों ने इसे इमामबाड़ा कहा।

मोहर्रम के अलावा साल के दूसरे दिनों में भी इमामबाड़ों में मजलिसें होती हैं। आमतौर पर जुमेरात को, चौदह मासूमीन की पैदाईश के मौक़े पर महफ़िलों होती हैं और वफ़ात के दिनों में मजलिसें। कुछ मजलिसें किसी के मरने पर उसको सवाब पहुँचाने के लिए होती हैं। इंतेक़ाल के बाद पहले इंतेक़ाल के दिन पर बरसी

होती है उसके बाद हर साल देसा होता है।

कुछ इमामबाड़ों में क़ब्रें नज़र आती हैं। यह वह इमामबाड़े हैं जहाँ बनवाने वाले अपनी वसीयत के अनुसार दफ़न किए गए। कुछ इमामबाड़े मक़बरे के तौर पर बनाए गए। कुछ इमामबाड़े ख़ानदान के लोगों के दफ़न करने की जगह हैं और कुछ में मुआवज़ा लेकर या क़ीमत देकर क़ब्रें मिल सकती हैं।

आमतौर पर इमामबाड़े की तीन हिस्से होते हैंः शहनशीन, जहाँ ज़रीह ताज़िये और अलम सजाए जाते हैं। यह हिस्सा अदब के हिसाब से इतना ऊँचा होता है कि ज़रूरतमंद हाथ आसानी से अंदर पहुँच सकते हैं, अदब से सर झुकाया जा सकता है, आँखें बिछाई जा सकती हैं और होंठ चूम सकते हैं।

शहनशीन के आगे दालान होता है जो मजलिस के लिए ख़ास होता है। इसमें फ़र्श पर दरी, चाँदनी या क़ालीन बिछे होते हैं। ख़ास चीज़ मिंबर है। यह एक ख़ास तरह की लकड़ी का ज़ीना होता है जिस पर बैठकर मरसिया पढ़ने वाला या मजलिस पढ़ने वाला इस अंदाज़ से करबला के वाक़िए की तफ़सील बयान करता है कि अगर इन्सान का ज़मीर (अन्तःकरण) जीता-जागता हो, सही और ग़लत में फ़र्क़ कर सके और सीने में दिल की जगह पत्थर न हो तो आँखों में आँसू आ ही जाते हैं। यह आँसू हुसैन[अ०] का सोग मनाने वालों की नज़रों में मोतियों से ज़्यादा क़ीमती और मानवता का प्रतीक और नजात का ज़रिया हैं।

यह भी हो सकता है कि मजलिस में शरीक होने वाले इतने ज़्यादा हों कि एक दालान में न समा सकें। इसलिए एक दालान के सामने दूसरा दालान या बरामदा होता है और जब वह भी भर जाता है तो बाद में आने वाले सहन में बैठते हैं, हिफ़ाज़त के लिए इमामबाड़े के चारो तरफ दीवारें होती हैं जिसमें आने-जाने के लिए एक या दो फाटक होते हैं।

इमामबाड़े की बिल्डिंग में सामने के हिस्से में पाँच दर होते हैं जो पंजतन पाक (मोहम्मद[स०], अली[अ०], फ़ातिमा[स०], हसन[अ०], हुसैन[अ०]) की याद दिलाते हैं। इमामबाड़े के दोनों तरफ़ छोटे बरामदे होते हैं जिनमें बारह इमाम के हिसाब से बारह दर होते हैं।

इमामबाड़े दो तरह के होते हैंः अ़वामी (General) और निजी। अवामी से मुराद वह इमामबाड़ा है जहाँ लोग बिना किसी मज़हब या मिल्लत के फ़र्क़ के मजलिस में शामिल हो सकते हैं या इमामबाड़े की ज़ियारत कर सकता है। निजी से मुराद वह इमामबाड़ा है जो मकान का एक हिस्सा हो। जहाँ घर वाले की इजाज़त या बुलाए बिना कोई नहीं जा सकता हो। इमामबाड़े के मर्दों के लिए और औरतों के लिए दो हिस्से भी हो सकते हैं।

जहाँ तक निर्माण कला की बात है लखनऊ और दिल्ली की ऐतिहासिक इमारतों में ख़ास फ़र्क़ यह है कि दिल्ली की इमारतें पत्थर की बनी हैं, लखनऊ में पत्थर न होने और सामान ढुलाई के ख़र्च से बचने के लिए इमारतें (जिनमें इमामबाड़े भी शामिल हैं) लखौरी, ईंटों और लाल चूने से बनाई गईं। मज़बूती के लिए गारे में पिसी हुई सीपें, माश की दाल, शीरा (राब) और गुड़ मिलाया गया। दिल्ली के पत्थर काटने वाले पत्थर काट कर अलग-अलग बनावट के खम्बे और मेहराबें बनाते और गुल-बूटे बनाते थे। लखनऊ के कारीगरों ने मेहराबों को सजाने के लिए मसाले से गुल-बूटे, बेलें और मछलियाँ बनाईं। बाहरी दीवारों को सादा छोड़ने के बजाए मसाले से ख़ास बनावट की खिड़कियों (Venetian-Blind) की नक़लें बनाईं। इस उभरी हुई सजावट को मुनब्बतकारी (Stucco-Work) कहते हैं। इसे आप कई इमामबाड़ों और मस्जिदों में देख सकते हैं, लखनऊ के चिकन में इस काम की झलक नज़र आती है। इस शुरुआत के बाद लखनऊ के मौजूदा इमामबाड़ों का संक्षिप्त परिचय पेश किया जाता है।

1- इमामबाड़ा आसफ़ी

बहुत ही मशहूर इमामाबाड़ा आसफ़ुद्दौला (राजकालः 1775[ई०]-1797[ई०]) ने बनवाया था। इसे आमतौर पर बड़ा इमामबाड़ा कहते हैं। यह हुसैनाबाद के छोटे इमामबाड़े से कुछ दूर सड़क के किनारे पर है। दोनों के बीच एक बहुत ही शानदार दरवाज़ा नज़र आता है जिसे रूमी दरवाज़ा कहते हैं। यह दोनों बिल्डिंगें लखनऊ की शान हैं। बड़ा इमामबाड़ा हिन्दुस्तान में इस्लामी निर्माण-कला

की आख़िरी निशानी है।

इस इमामबाड़े का निर्माण 1784ई॰ में सूखे के समय आम लोगों की मदद के लिए शुरु हुआ था। ज़ाहिर है कि क़िले जैसी यह बिल्डिंग बरसों में तैयार हुई होगी। बनने की 'तारीख़' यह है-

आस्ताने शहीद इब्ने शहीद (1203हि॰ मुताबिक़ 1788ई॰)

इस हैरतभरी बिल्डिंग का नक़्शा किफ़ायतुल्लाह शाहजहाँबादी ने बनाया था, लेकिन अफ़सोस कि अब यह नक़्शा मौजूद नहीं है। अगर होता तो इमामबाड़े की भूल-भुलैय्या का राज़ खुलता और ज़मीन के अंदर बने रास्तों के राज़ मालूम होते। इमामबाड़े के निर्माण की लागत का अंदाज़ा उस ज़माने के डेढ़ करोड़ रुपये किया जाता है। काम करने वालों की संख्या 22000 बताई जाती है।

हुसैनाबाद से बड़े इमामबाड़े की तरफ़ आने पर रूमी दरवाज़े के सामने का हिस्सा नज़र आता है। यह बड़े इमामबाड़े में जाने का ख़ास दरवाज़ा है। इसमें तीन बड़े ऊँचे दर हैं। बड़े-बड़े ट्रक सामान से लदे बीच के दर से आसानी के साथ गुज़रते हैं। छोटी सवारियाँ और पैदल चलने वाले इधर-उधर के दरों से आते-जाते हैं।

रूमी दरवाज़ा पार करने के बाद दायीं तरफ़ इमामबाड़े का पहला फाटक नज़र आता है जिसमें तीन दर हैं, सड़क पार उसके सामने बायीं तरफ़ का फाटक इसका जवाब है जिसे नौबत ख़ाना कहते हैं। फाटक में जाने के बाद एक चौड़ा आंगन नज़र आता है जिसके बीच में गोल घांस का मैदान है और दोनों तरफ़ रास्ते हैं। इस आंगन के सिरे पर 19 ज़ीने हैं जिन पर चढ़कर एक दूसरा फाटक मिलता है। इसमें भी तीन दर हैं। बीच का दर आने-जाने के लिए खुला है। (पास के दर बंद हैं। उनके सामने और ज़ीनों पर ख़ूबसूरत पौधों के गमले सजे हैं) इस फाटक से गुज़रने के बाद दूसरा हरा-भरा आंगन मिलता है जिसके दाईं तरफ़ आसफ़ी मस्जिद और बायीं तरफ़ बावली है। सामने इमामबाड़े की शानदार इमारत एक ऊँचे चबूतरे पर बनी है। इस चबूतरे के सामने पत्थर के 18 ज़ीने हैं। सामने की तरफ़ छोटे बरामदों के दरवाज़े मिलाकर कुल 13 दर हैं (3+7+3) जिनमें जालीदार लकड़ी के दरवाज़े अंग्रेज़ी राज के ज़माने में बढ़ाए गए हैं।

इमामबाड़ा देखने में एक लेकिन हक़ीक़त में तीन मंज़िला बिल्डिंग है जिसके तीन दर्जे हैं: पीछे की तरफ़ तेरा दरों वाली शह-नशीन और सामने वाला दालान। शह-नशीन की शोभा अनमोल ताज़िये और अलम हैं। अंदुरुनी दालान की लम्बाई 163 फ़िट, चौड़ाई 53 फ़िट और ऊँचाई 50 फ़िट है। इसकी दीवारें 16 फ़िट मोटी हैं। इतने बड़े हाल की छत में सहारे के लिए कहीं भी लोहे या लकड़ी का इस्तेमाल नहीं किया गया है। छत क़ालिबदार यानी उसका वज़न कमानदार डाटों पर बांटा गया है। यह दुनिया में अपनी तरह का सबसे बड़ा हाल है। और इसकी छत की गिनती दुनिया के अजूबों में होती है। यहाँ यह बताना ज़रूरी है कि शह-नशीन और दालानों के दोनों तरफ़ जो छोटे बरामदे हैं, उनकी ऊँचाई 53 फ़िट और दीवारों की मोटाई 16 फ़िट है) बीच के दालान के बीच में नवाब आसफ़ुद्दौला की क़ब्र है। और उनके पास ही उनके बीवी शम्सुन्निसा बेगम दफ़न हैं। इस दालान के सामने एक दूसरा दालान है। यह दोनों दालान जो मजलिसों के लिए वक़्फ़ हैं बहुत ही ख़ूबसूरत और क़ीमती झाड़-फ़ानूस से सजे हैं, कुछ छत से लटक रहे हैं और कुछ फर्श पर रखे हैं। ये बेल्जियम और इंग्लैण्ड के बने हैं। इनके अलावा शह-नशीन के सामने कुछ बहुत बड़े आइने सजे हैं जिनके फ्रेम सुनहरी हैं। जो शीशा आलात मौजूद हैं वह बस नाम के हैं। बहुत 1857ई॰ की आज़ादी की जंग में बरबाद हो गए। मोहर्रम में जब यह रौशन किए जाते हैं तो इमामबाड़े में रंग व प्रकाश का सैलाब आ जाता है।

आठवीं और नवीं मोहर्रम को इस इमामबाड़े में रौशनी की जाती है (इन्हीं तारीख़ों में छोटे इमामबाड़े और शाहनजफ़ में भी रौशनी होती है) 6 मोहर्रम को आग का मातम होता है। रौशनी और आग का मातम देखने के लिए लोग दूर-दूर से आते हैं।

आसफ़ी इमामबाड़े में पहली मंज़िल से लेकर तीसरी मंज़िल की छत तक भूल-भुलैय्याँ है जिसके रास्ते और दर एक ही तरह के हैं। दरों की ऊँचाई और रास्तों

की चौड़ाई इतनी है कि एक बार में एक तंदुरुस्त इन्सान गुज़र सकता है। दरों की संख्या 489 और रास्ते हज़ार बयान किए जाते हैं। रौशनी और हवा पहुँचने के लिए दीवारों में जगह-जगह रौशनदान हैं। रास्ते में कहीं ज़ीनों पर चढ़ना पड़ता है और कहीं उतरना। इस से ज़ाहिर होता है कि यह रास्ते अलग-अलग ऊँचाइयों पर हैं।

भूल-भुलैयाँ में जाने का रास्ता इमामबाड़े के बाहर बाईं तरफ़ है (बाहर से अंदर आने के हिसाब से) अगर गाइड साथ न हो तो इन्सान घंटों भटकता रहे। और बाहर न निकल सके। कहा जाता है कि इमामबाड़े की मोटी-मोटी दीवारों और मेहराबों के पाए भी कुछ खुले हैं। उनमें भूल-भुलैय्याँ का कुछ हिस्सा है। इसी तरह फर्श के नीचे तहख़ाने और मुश्किल रास्ते हैं, उनमें जो गया कभी वापस न आया। इसीलिए उन्हें एहतियात के तौर पर अंग्रेज़ी राज के ज़माने में बंद कर दिया गया।

इमामबाड़ा, भूल-भुलैयाँ, बावली और रूमी दरवाज़ा देखने के लिए दिनभर लोगों की भीड़ लगी रहती है। भीड़ में आसपास के, देशी और विदेशी हर तरह के लोग नज़र आते हैं। यह लखनऊ की अकेली इमारत है जिसे देखने के लिए बाहरी टूरिस्ट ख़ासतौर से आते हैं।

आसफ़ी इमामबाड़ा और उससे जुड़ी इमारतें पुरातत्व विभाग और हुसैनाबाद ट्रस्ट की निगरानी में हैं।

2- इमामबाड़ा हुसैनाबाद

इसे आमतौर से छोटा इमामबाड़ा कहते हैं। इसे अवध के तीसरे बादशाह मोहम्मद अली शाह ने 1837ई० में बनवाया था। यह बड़े इमामबाड़े से कुछ दूर उस सड़क पर है जो हुसैनाबाद से ठाकुरगंज जाती है। इमामबाड़ा सड़क के बाईं तरफ़ है। अंदर जाने के लिए तीन दरों वाला फाटक है। इस फाटक का जवाब सड़क के दायीं तरफ़ है। उसे नौबतख़ाना कहते हैं।

फाटक में दाख़िल होने पर एक लोहे का गेट मिलता है जिसके ऊपर एक सुनहरी मछली लगी हुई है जो हवा की दिशा बताती है। इस फाटके के दोनों तरफ़ दो ख़ूबसूरत औरतों की सुनहरी मूर्तियाँ लगी हुई हैं जिनका पहनावा यूनानी है। हर औरत लोहे की लम्बी जंजीर थामे है जिसका दूसरा सिरा फाटक के ऊपरी हिस्से से बंधा है।

मछली वाले फाटक के आगे एक चौड़े सहन के दोनों तरफ़ बाग़ है। सहन के बीच में एक नहर (लम्बा हौज़) है जो फव्वारों से सजा है। बीच में लोहे का ख़ूबसूरत पुल है। उस पुल के आगे पहले एक कश्ती पर दुलदुल की मूर्ति थी जो कुछ ज़माने पहले आँधी-तूफ़ान में टूट गयी। इसकी बड़ी कमी महसूस होती है।

इमामबाड़े के सहन के दायीं तरफ़ के हिस्से में एक ख़ूबसूरत मस्जिद और बाईं तरफ़ शाही हम्माम है। (आसफ़ी इमामबाड़े में दायीं तरफ़ एक बड़ी मस्जिद और बायीं तरफ़ बावली है) इमामबाड़े के दोनों तरफ़ ग़ुलाम-गर्दिश है जिसके दाईं तरफ़ के एक कमरे में दुलदुल का अस्तबल था।

नहर के दोनों तरफ़ ताजमहल से मिलती हुई दो छोटी इमारतें हैं। दाईं तरफ़ वाली इमारत को शहज़ादी का मक़बरा कहते हैं। इसमें मोहम्मद अली शाह की बेटी दफ़न हैं जिनका बचपन में इंतेक़ाल हो गया था। बायीं तरफ़ इस मक़बरे का जवाब है।

सहन के सामने दूसरे सिरे पर इमामबाड़े की इमारत एक आदमी भर ऊँचे चबूतरे पर बनी है जिसके दोनों तरफ़ ज़ीने बने हैं और बीच में एक ख़ूबसूरत हौज़ है।

इमामबाड़े की इमारत के तीन दर्जे हैंः शह-नशीन, बीच का दालान और अगला दालान (या कमरा) जो आगे को निकला हुआ है। अगले दालान में सामने की तरफ़ पाँच दर हैं। इमारत के ऊपर और मेहराबों पर नस्ख़ लिपि में कतबे हैं। बीच में फ़ारसी भाषा में निर्माण की 'तारीख़' लिखी हैः-

शहे ज़माना मोहम्मद अली बिना फ़रमूद
इमामबाड़ा पए ज़िक्रे मजलिसे हसनैन
ज़े रुए आहे दिलम ख़ांद नौह-ए-तारीख़
बिनाए ताज़िया-ओ-मातम इमामे हुसैनअ०
1253हि० (1837ई०)

धूप में चमकता सुनहरा गुम्बद इमामबाड़े की ख़ूबसूरती को दुगना करता है। इसमें कमरख़ जैसी फ़ांकें हैं। ताज महल से मिलती इमारतों के कलस के नीचे के

हिस्से बादशाह के ताज की नक़्ल हैं। उनकी सुनहरी चमक हल्की हो गई है और कुछ हिस्से मरम्मत चाहते हैं।

शह-नशीन में (बायें से दायें को) मोम की ज़रीह, संदल का ताज़िया, छोटे मुँह की बोतल में हाथी दाँत की ज़रीह, बीच के दर में चाँदी का इमाम हुसैन[अ०] का रौज़ा, संदल और हाथी दाँत के बने इमाम रिज़ा[अ०] के रौज़े और क़ीमती अलम देखने लायक़ हैं।

शह-नशीन के सामने बीच के दालान के बीचोबीच दाहिनी तरफ़ मोहम्मद अली शाह की क़ब्र है और बाएं तरफ़ उनकी माँ (मलक-ए-आलिया) की। कुछ दूर पर शामियाने के नीचे चाँदी का मिंबर नज़र आता है। फ़र्श बहुत ही ख़ूबसूरत संगे मरमर (सफ़ेद), संगे मूसा (काला) और संगे ईसा (लाल) का बना हुआ है। दीवारें लिखावट के बेहतरीन नमूनों और तुग़रों से सजी हैं। सुनहरी फ्रेम वाले आईने भी देखने लायक़ हैं। ख़ास सजावट शीशे की चीज़ों की है। बेल्जियम और इंग्लैण्ड के बने भारी-भरकम झाड़ छत से लटके और फ़र्श पर रखे हैं, इनके अलावा चीन की बनी हुई रंग-बिरंग हांडियाँ और झाबे भी सजे हुए हैं। मोहर्रम में जब इनमें रौशनी की जाती है तब जैसे उनमें जान पड़ जाती है। झाड़ों के तीन फल वाले क़लमों में इंद्रधनुश के सात रंग नज़र आते हैं। रंग व नूर से जो कैफ़ियत पैदा होती है इसको शब्दों में बयान नहीं किया जा सकता।

इमामबाड़े का इंतेज़ाम हुसैनाबाद ट्रस्ट के ज़िम्मे है। यह ट्रस्ट (वक़्फ़) मोहम्मद अली शाह ने 1839[ई०] में स्थापित किया था और इसके लिए ईस्ट इण्डिया कम्पनी के ख़ज़ाने में 36 लाख रुपये जमा किये थे।

3- इमामबाड़ा शाह नजफ़

यह इमामबाड़ा गोमती नदी के किनारे पर है। इसके दायीं तरफ़ सिकंदर बाग़ और बायीं तरफ़ कुछ दूर पर मोती महल है। मोती महल के अलावा जवाहर भवन और शाहनजफ़ रोड (हज़रतगंज) से भी रास्ते जाते हैं। इसे अवध के पहले बादशाह ग़ज़ीउद्दीन हैदर (राज काल 1814[ई०]-1827[ई०]) ने बादशाहत का एलान (1819[ई०]) करने से पहले बनवाया था। निर्माण की 'तारीख़' है-

बा हुस्ने अक़ीदत नजफ़े अशरफ़ रा
फ़रमूद बिना निहंद नव्वाब वज़ीर
तारीख़े मुबारकश चू जस्तम अज़ अक़्ल
हातिफ़ गुफ़्ता अजब नजफ शुदे तामीर
1232[हि०] (1816-17[ई०])

अन्दुरूनी फाटक पर लिखा है ''शबीहे रौज़ा नजफ़ अशरफ़'' यह पैग़म्बरे इस्लाम[स०] के चचाज़ाद भाई और दामाद हज़रत अली[अ०] के मज़ार की नक़ल है जो इराक़ के शहर नजफ़ में है।

पहला फाटक सड़क के किनारे है जिसके ऊपर दो शेर बने हैं जो हज़रत अली के लक़ब (उपनाम) असदुल्लाह (फ़ारसीः शेरे ख़ुदा) की याद दिलाते हैं। शेरों के पंजे दो मछलियों के हल्क़े पर टिके हैं। ऊपर ताज बना है (जिस से ज़ाहिर होता है कि यह फाटक हो सकता है बादशाही के एलान के बाद बढ़ाया गया है) फाटक की मेहराब गोल है, उसके दोनों तरफ़ गुम्बद हैं।

इस फाटक के आगे पक्का रास्ता है जिसके आसपास हरी-भरी घांस है। इसके बाद दूसरा फाटक मिलता है। यहाँ एक नौकर हर एक घंटे के बाद वक़्त के हिसाब से घंटा बजाता है। फाटक के दोनों तरफ़ नौकरों के रहने के लिए कमरे हैं। इसके बाद तीसरा फाटक है जहाँ से रौज़े के दक्षिणी ओर और छत पर शानदार सफेद गुम्बद नज़र आता है। गुम्बद का कलस सुनहरी है। रौज़े की इमारत चौकोर है। इसके चारो तरफ़ गुलाम-गर्दिश है।

रौजे के पश्चिमी तरफ़ एक छोटी मस्जिद है। उत्तर की ओर चौथा फाटक है। इसके बाद दीवार में पाँचवां फाटक है जो आमतौर पर बंद रहता है। इस फाटक से कुछ दूर गोमती नदी है।

इमामबाड़े में दाख़ला चौथे फाटक से होता है। बरामदे के बाद ख़ास इमारत के तीन दरवाज़े नज़र आते हैं जिनमें बरमा के सागवन (Teak) की बनी नक़्शी चूड़ियाँ लगी हैं। अंदर का फ़र्श संगे मरमर (सफ़ेद) और संगे मूसा (काले) का शतरंजी है। गुम्बद आठ फलक वाला है। जिसके हर तरफ़ रौशनदान है। गुम्बद के नीचे तीन क़ब्रें हैं। बीच में ग़ाज़ीउद्दीन हैदर की, दायीं तरफ़

मुबारक महल की और बायीं तरफ़ मुम्ताज़ महल की क़ब्रें हैं। इन से ज़रा दूरी पर बायीं तरफ़ बादशाह की तीसरी बीवी सरफ़राज़ महल दफ़न हैं। क़बरों पर ताज़िये रखे हैं। इसके क़रीब मिंबर नज़र आता है।

इमामबाड़े का दक्षिणी दरवाज़ा बंद कर दिया गया है। इस हिस्से में शह-नशीन है जहाँ चाँदी की नजफ़ अशरफ़ प्रतिमा, संदल का ताज़िया और अलम सजे हैं।

इमामबाड़े की सजावट देखने वाली है। अनमोल फ़ानूस, पीली, नीली और सब्ज़ हांडियाँ छत से ठीक दूरी पर लटकी हैं, फ़र्श पर बैठकें (फ़र्श झाड़) मिरदंग रखे हैं।

इमामबाड़े में दाख़िल होते ही दीवार पर फ्रेम की हुई तीन तस्वीरें (Oil Paintings) नज़र आती हैं। ग़ाज़ीउद्दीन हैदर, नवाब सर मोहसिनुद्दौला और नवाब मुम्ताज़ुद्दौला की यह तस्वीरें मिसेज़ जापलिंग रो (Mrs. Jopling Rowe) की बनाई हुई हैं।

ग़ाज़ीउद्दीन हैदर ने 1825ई० में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के ख़ज़ाने में एक करोड़ रुपये बतौर क़र्ज़ हमेशा के लिए जमा किए थे जिसका ब्याज बेगमों की वसीक़े, इमामबाड़े को बाक़ी रखने और अज़ादारी जारी रखने के लिए वक़्फ़ किया था।

ग़ाज़ियुद्दीन हैदर के बाद उनकी बेगम मुबारक महल, उनके बाद हकीम बंदा मेहदी ख़ाँ वसिय्यत के हिसाब से शाह नजफ़ के मुतवल्ली हुए। उनके बेटे और जानशीन हकीम बंदा रज़ा ख़ाँ ने बिना वसीयत 1900ई० में इंतेक़ाल किया। इसलिए शाह नजफ़ का इंतेज़ाम हुसैनाबाद ट्रस्ट के ज़िम्मे कर दिया गया। शाह नजफ़ के ऐतिहासिक महत्व को देखते हुए इमामबाड़ा पुरातत्व विभाग की निगरानी में है।

1857ई० की आज़ादी की जंग में वतन के चाहने वालों ने सिकंदर बाग़ की तरह यहाँ भी अंग्रेज़ी फ़ौज का ज़बरदस्त मुक़ाबला किया था लेकिन हार हुई। इस जंग में शाह नजफ़ का क़ीमती सजावट का सामान लूट लिया गया या टूट-फूट गया, जो बचा वह हमारे सामने है।

4- इमामबाड़ा सिब्तैनाबाद

यह इमामबाड़ा हज़रतगंज में है (नम्बर 30)। इसे आमतौर पर लोग मक़बरा कहते हैं क्योंकि यहाँ हज़रतगंज के संस्थापक हज़रत अमजद अली शाह (राजकाल 1842ई०-1847ई०) दफ़न हैं।

इसे हज़रत अमजद अली शाह के बेटे वाजिद अली शाह ने दस लाख रुपये की लागत से बनवाया था। निर्माण की 'तारीख़' हैः-

"आराम गाहे ज़िल-लुल्लाह"

1264हि० (1847ई०)

उन्होंने इसका नाम रखा सिब्तैनाबाद (सिब्त अरबी शब्द है जिसके मानी हैं नवासा, रसूले ख़ुदास० के नवासे इमाम हसनअ० और इमाम हुसैनअ० मुराद हैं) यह शाही ज़माने की लखनऊ में आख़िरी यादगार है। राज से गिराये जाने के बाद वाजिद अली शाह ने मटियाबुर्ज कलकत्ते में इसी नाम का दूसरा इमामबाड़ा बनवाया जहाँ उनकी आख़िरी आरामगाह है।

1857ई० की आज़ादी की जंग में इस इमामबाड़े को बहुत नुक़सान पहुँचा। इसका सारा सजावट का सामान लुट गया। इमामबाड़े के सामने दो फाटक हैं जिनके बीच "मक़बरा रोड" है। ज़ाहिर है कि यह सड़क अंग्रेज़ राज के ज़माने की है। पहले यहाँ दोनों फाटकों के बीच सहन और बाग़ रहा होगा। सड़क के दोनों तरफ़ की इमारतें भी बाद की बनी हुई हैं। इमामबाड़े की चौड़ाई का अंदाज़ा इसके पीछे की लालबाग़ की उस गली में जाकर हो सकता है जिसका नाम बी०एन० घई (B.N. Ghai Lane) लेन है।

इमामबाड़ा सिब्तैनाबाद बड़े इमामबाड़े की छोटी-मोटी नक़ल है। इमारत एक ऊँचे चबूतरे पर बनी हुई है जिसके दोनों तरफ़ ज़ीने और बीच में हौज़ है (जिसे पाट दिया गया है)।

इमामबाड़े में शह-नशीन के सामने दो दालान हैं। हर एक में पाँच-पाँच दर हैं। दालानों के दोनों तरफ़ दो मंज़िला सहनचियाँ हैं जिनमें ऊपर नीचे तीन-तीन दर हैं। इमारत लखौरी ईंट और लाल चूने की बनी है। बड़े इमामबाड़े की तरह इसकी छत में भी लोहे या लकड़ी का इस्तेमाल नहीं किया गया है मेहराबों और पीछे की मुनब्बतकारी देखने लायक़ है।

इमामबाड़े की दायीं तरफ़ मस्जिद है। सामने सहन के बीच में अन्दुरूनी फाटक है। फाटक और सहन के दोनों तरफ़ गुलाम-गर्दिश है, जिसके कमरों और फाटकों में किरायेदार बसे हैं। अगले फाटक में दुकानें हैं। शह-नशीन और बाईं तरफ़ की सहनची में लकड़ी के फरनीचर का कारख़ाना है। चबूतरे के सामने झोंपड़ियाँ और ऊपर टीन का बना गोदाम है। इमामबाड़ा पुरातत्व विभाग की निगरानी में है।

5- इमामबाड़ा क़ासिम अली ख़ाँ

यह इमामबाड़ा हुसैनाबाद के नज़दीक महल्ला पीर बुख़ारा में ढाल पर है। इसके सामने चौक का फ़ायर स्टेशन और क़रीब ही कोनेश्वर का मंदिर है। इसे नवाब क़ासिम अली ख़ाँ सुपुत्र मिर्ज़ा मोहम्मद अली सालारजंग ने आसिफ़ुद्दौला के ज़माने (1779ई॰-1797ई॰) में बनवाया था। इसके पास ही मिर्ज़ा अली ख़ाँ का मक़बरा है (देहान्तः 1779ई॰) और वह सालारजंग के सगे भाई और नवाब आसिफ़ुद्दौला के मामू थे।

दूसरे इमामबाड़ों से हटकर जिनका रुख़ दक्षिण की तरफ़ है इसका रुख़ पश्चिम की तरफ है। यह काले इमामबाड़े के नाम से मशहूर है क्योंकि इसकी काली दीवारों और मेहराबों पर क़ुरआनी आयतें नस्ख़ लिपि में सफेद रंग से लिखी हुई गई थीं और सफ़ेद रंग से तुग़रे। मस्जिद, गुलदस्ते, दुलदुल, ऊँट और बुर्राक़ वग़ैरा बनाए गए थे।

शह-नशीन की छत पुरानी है। सामने दो दालान हैं (अगले दालान को बरामदा कहना मुनासिब होगा) जिनकी छतें नई बनी हुई हैं। ख़ास इमारत के पास छोटे बरामदे हैं, दरवाज़े लोहे के हैं। कुल मिलाकर नौ दर हैं (2+5+2) इमामबाड़े की साज लकड़ी की एक ज़रीह है जो इमाम अली रिज़ा (आठवें इमाम) के रौज़े की नक़ल है।

इमामबाड़े के सामने एक चौड़ा सहन है जहा बहुत सी क़ब्रों के निशान हैं। सालारजंग (देहान्त 1787ई॰) और उनके बेटे क़ासिम अली ख़ाँ भी इसी इमामबाड़े में दफ़न हैं लेकिन क़ब्रों का पता नहीं। इमामबाड़ा वसीक़ा दफ़्तर की देखरेख में है। अज़ादारी और मजलिसें होती हैं।

6- इमामबाड़ा ज़ैनुलआबेदीन ख़ाँ

गोल दरवाज़े से काकोरी जाने वाली सड़क पर बायीं तरफ़ काली चरन इण्टर कालेज है। इस से मिला हुआ एक शानदार मगर ख़राब हालत में इमामबाड़ा नवाब आसफ़ुद्दौला के ज़माने (1775ई॰-1797ई॰) की यादगार है। इसे मीर ज़ैनुलआबेदीन ख़ाँ (देहान्तः1207हि॰/1792ई॰) ने बहुत ख़र्च से अलमासी ईंट से बनवाया था। वह अलमास अली ख़ाँ ख़्वाजासरा की तरफ़ से कई परगनों के प्रभारी थे।

इस इमारत में शह-नशीन के सामने पाँच-पाँच दरों के दो दालान हैं। छतें गिरने की वजह से यह इमामबाड़ा बहुत ज़माने तक ईंटों का ढेर बना रहा। दालान अब भी बग़ैर छतों के हैं। शह-नशीन की छत नई बनी है। इसकी दीवार पर संगे मरमर की तख़्ती पर यह लिखा हैः

मौलाना कल्बे आबिद हाल
इफ़्तेताहः 28 जून 1992ई॰
बदस्तः मौलाना कल्बे जवाद साहब क़िब्ला
मिनजानिबः अली कांग्रेस

(इस लेख के छपने के बाद इमामबाड़े में दूसरे दो बड़े हालों का पुनःनिर्माण 17 रबीउल अव्वल 1424हि॰/19 मई 2003ई॰ में मौलाना कल्बे जवाद नक़वी के हाथों हुआ जिसमें एक 'मौलाना आक़ा हसन हाल' और एक 'शम्सुल हसन शम्सी हाल' के नाम से बने साथ ही इमामबाड़े का बाहरी दरवाज़ा 'बाबे आक़ाए शरीअत' के नाम से बना।)

दरों के पायों और मेहराबों पर बड़ी ही ख़ूबसूरत मुनब्बतकारी है जो देखने से ताल्लुक़ रखती है। दालानों के सामने चौड़ा सहन है जिसे सजावट की ज़रूरत है। इमामबाड़े में हमेशा की तरह मजलिसें होती हैं।

(मुतवल्लीः सैय्यद कल्बे जवाद साहब क़िब्ला)

7- इमामबाड़ा राजा झाउलाल

यह इमामबाड़ा ठाकुरगंज में है। इसे नवाब आसफ़ुद्दौला के वज़ीर राजा झाउलाल ने बनवाया था। जब क़ुदवतुल उलमा सैय्यद आक़ा हसन (इंतेक़ाल 1348हि॰ मुताबिक़ 1929ई॰) ने यहाँ "शिया बैतुलमाल" स्थापित किया तब से यह इस नाम से मशहूर हो गया।

इमामबाड़े के राजा झाउलाल की बनवाई मस्जिद भी है जो इमली वाली मस्जिद के नाम से मशहूर है। पहले यह मस्जिद इमामबाड़े के घेरे में थी लेकिन सड़क (काकोरी रोड) निकलने की वजह से अलग हो गई।

इमामबाड़े के दाईं तरफ़ बाबा गोमती दास का मन्दिर है (उसके पीछे टी०बी० अस्पताल है) इसे नवाब आसफ़ुद्दौला (1775ई०-1797ई०) ने बाबा के रहने के लिए बनवाया था। इसीलिए इसे बाबा गोमती दास का स्थल भी कहते हैं। इमामबाड़े और इस मंदिर की बनावट एक ही तरह (मुग़ल और राजपूत निर्माण शैलियों का मेल) है।

इमामबाड़े का सहन पहले काफ़ी बड़ा था, लेकिन घेरे की दीवार गिर जाने की वजह से लोगों ने धीरे-धीरे इमामबाड़े की ज़मीन पर क़ब्ज़ा कर लिया। इमामबाड़े के दोनों तरफ़ मकान और दुकानें हैं।

मौजूद इमारत में शह-नशीन के सामने दालान है। दोनों में नौ-नौ दर हैं। दालान के पहलुओं में तीन-तीन दर हैं। इसकी छतें और हिस्से गिर गए थे फिर से बनाए गए हैं। बनने का काम जो सन 1767-68ई० से शुरु हुआ था अब पूरा हो चुका है। अन्जुमन रज़ाकाराने हुसैनी इस इमामबाड़े की निगरानी करती है। यहाँ बाक़ाएदा मजलिसें होती हैं।

(मुतवल्लीः सै० शम्सुल हसन 'ताज', सेक्रेट्री अन्जुमन रज़ाकाराने हुसैनी)

8- इमामबाड़ा मलका ज़मानिया

यह इमामबाड़ा मोहल्ला गोलागंज में है। इसके सामने जगत नरायन रोड़ और दायीं तरफ़ वह सड़क है जो झाउलाल के पुल से होकर अमीनाबाद जाती है। इसके सामने दायीं तरफ़ मस्जिद मलका ज़मानिया है, यह दोनों इमारतें नवाब मलका ज़मानिया नसीरुद्दीन हैदर की बेगम ने मोहम्मद अहसन ख़ाँ के एहतेमाम से 1837ई० में बनवाई थीं।

दिसम्बर 1843ई० में अमजद अली शाह के ज़माने में इन्तेक़ाल किया और अपने ही इमामबाड़े में दफ़न की गईं लेकिन क़ब्र का पता नहीं। इमामबाड़े की हालत बहुत ही दयानीय है। मस्जिद आबाद है।

इमामबाड़े की इमारत में एक शह-नशीन और उसके सामने दो चौड़े दालान हैं। हर एक में पाँच-पाँच दर हैं। पहलू में तीन दरों वाली सहनचियाँ हैं। सामने की सहनचियाँ दो मंज़िला तीन-तीन दरों वाली हैं। छतें सब गिर चुकी हैं। सिर्फ़ एक हिस्से में धन्नियाँ, झँपें और कुछ शहतीर बाक़ी हैं।

इमामबाड़े के आँगन की जगह एक कच्चा मैदान है जिस पर एक दूध वाले का क़ब्ज़ा है। गायें इमामबाड़े के अंदर आराम करती हैं (शायद उन्हें भी शान्ति की ज़रूरत है) जगह-जगह कण्डों, उपलों और गोबर के ढेर नज़र आते हैं। ऊबड़-खाबड़ ज़मीन और कूड़े-करकट को पार करके इमामबाड़े तक पहुँचा जा सकता है।

पहले इसके आँगन में नहर थी। सड़क पर एक शानदार फाटक था। दरवाज़ों और दीवारों पर ख़ूबसूरत सजावट और रंगीनी थी, लेकिन अब कुछ बाक़ी नहीं है। इमामबाड़े की ज़मीन बेची जा चुकी है जिस पर बिल्डिंगें और दुकानें बन गई हैं। बहरहाल जो कुछ बाक़ी रह गया है उसे और बर्बाद होने से बचाने की सख़्त ज़रूरत है। सैय्यद आग़ा महदी साहब, लेखक "तारीख़े लखनऊ" की राय में यह इमामबाड़ा अपनी बड़ाई के हिसाब से तीसरे नम्बर पर है। इमामबाड़ा आसफ़ी, इमामबाड़ा झाउलाल, इमामबाड़ा मलका ज़मानी बड़ी इमारतें हैं"।[१]

9- इमामबाड़ा विलायती महल

यह इमामबाड़ा बेगम वाली कोठी, रेज़ीडेंसी (बेलीगारद) में है। इस कोठी में कभी जार्ज हाप्किंस वाल्टर्ज़ (George Hopkins Walters) का ख़ानदान रहा करता था। उनकी एक बेटी से शाह नसीरुद्दीन हैदर ने 1827ई० में शादी करके नवाब मुख़द्दर-ए-उल्या की उपाधि दी। वह विलायती महल के नाम से मशहूर हुईं। बादशाह के इन्तेक़ात 1837ई० के बाद वह राजमहल से अपने माँ-बाप के मकान में चली गईं और इन्तेक़ाल के बाद (1840ई०) अपने मकान के आँगन में अपनी माँ की क़ब्र के पास दफ़न की गईं। (यह मकान उनके रहने की वजह से बेगम वाली कोठी के नाम से मशहूर हो गया।)

बेगम वाली कोठी से मिला हुआ एक इमामबाड़ा और एक मस्जिद है जिन्हें नवाब मुख़द्दर-ए-उलिया या

उनकी सौतेली बहन नयी-नयी मुसलमान बहन अशरफुन्निसा ने बनवाया था। ग़दर में इन दोनों इमारतों को बहुत नुक़सान पहुँचा।

इमामबाड़े में एक शह-नशीन और सामने दो दालान हैं। तीनों में पाँच-पाँच दर हैं। दोनों तरफ़ तीन दरों वाली ऊँची-ऊँची सहनचियाँ हैं। छतें सबकी गिर चुकी हैं। सामने चौड़ा आँगन हैं। पूर्वी ग़ुलाम-गर्दिश अब बाक़ी नहीं है। पश्चिमी ग़ुलाम-गर्दिश की छत के एक हिस्से पर मस्जिद है जो ऊँचाई की वजह से दूर से नज़र आती है। "इमामबाड़े में मुनब्बती नक़्श और गुल-बूटे बहुत ही अच्छे और ख़ूबसूरत बने हुए हैं जो उस ज़माने की कारीगरों की उस्तादी और फ़न को दर्शाते हैं। वाक़िआ यह है कि जैसा ख़ूबसूरत और ठीक-ठीक आंखों को भाने वाला सजावटी काम इस मस्जिद और इमामबाड़े में बना है ऐसा रेज़ीडेंसी की किसी इमारत में नहीं है।[2]

10- इमामबाड़ा मुग़ल साहब

यह इमामबाड़ा दरगाह हज़रत अब्बासी की दायीं तरफ़ मोहल्ला रुस्तम नगर में वज़ीरबाग़ रोड पर है। रास्ता गली से होकर पुलिया के पार है। इसे ताजदारे अवध नरेश मोहम्मद अली शाह की बेटी मुग़ल साहब ने 1879ई० में बनवाया था। मुग़ल साहब उर्फ़, असली नाम उम्मतुस्सुग़रा फ़ख़्रुन्निसा बेगम था। इन्तेक़ाल के बाद (8 दिसम्बर 1893ई०) अपने ही इमामबाड़े के दालान में दफ़न की गईं।

इमामबाड़े के शानदार फाटक का सिर्फ़ एक पक्खा (दाईं तरफ़ का) बाक़ी है जिसके ऊपर ख़ूबसूरत गुम्बद है। फाटक के इस हिस्से में ऊपर से नीचे तक बहुत ही ख़ूबसूरत मुनब्बतकारी है। "इस अंदाज़ का नाज़ुक और दिलकश काम लखनऊ के किसी इमामबाड़े के फाटक में नहीं है"।[3]

फाटक के दायीं तरफ़ एक दो मंज़िल की इमारत है जिसमें ऊपर-नीचे पाँच-पाँच दर हैं। ऊपर के कमरों और नीचे की दुकानों में किराएदार रहते हैं। शायद ऐसी ही इमारत फाटक के दाईं तरफ़ भी थी लेकिन अब उसका नाम निशान तक बाक़ी नहीं है।

पहले फाटक से गुज़रकर कुछ दूरी पर एक दूसरा फ़ाटक मिलता है जो बहुत ख़राब है। उसके अंदर के रुख़ पर दो मछलियाँ बनी हैं। इमामबाड़ा उस फाटक के दायीं तरफ़ है। फाटक के बाहर, बायीं तरफ़ ऊँचाई पर मुग़ल साहब की बनवाई हुई मस्जिद है। दोनों के रास्ते खड़ी लखौरी ईंटों से बने हैं।

इमामबाड़ा एक ऊँचे चबूतरे पर बना है जिसके दोनों तरफ़ पाँच-पाँच ज़ीने हैं। चबूतरे के सामने एक चौड़ा आंगन है जिसके बीच में एक ख़ूबसूरत नहर (पक्का लम्बा हौज़) है। आंगन के दोनों तरफ ग़ुलाम-गर्दिश है जिसके कमरों में किराएदार बसे हैं।

इमामबाड़ा एक शह-नशीन और दो दालानों से मिलकर बना है। हर एक में पाँच-पाँच दर हैं। सामने के रुख़ के दोनों तरफ़ बहुत ही ख़ूबसूरत गुम्बद हैं जिनके नीचे की बनावट आठ फलक है। इनसे मिले हुए कमरों में दोनों तरफ़ ऊपर जाने के लिए ज़ीने हैं। इमामबाड़े के अंदर की मुनब्बतकारी और रंगीनी देखने लायक़ है। प्लास्टर में जो मसाला लगा था उसका ज़्यादा हिस्सा कटे पत्थरों का है और सफ़ाई में वह चमक है जो किसी इमारत में नहीं"।[4]

इमामबाड़े का मिंबर संसार में दुर्लभ है। इतना ऊँचा मिंबर हिन्दुस्तान भर में नहीं है। कहा जाता है कि यह मिंबर मुग़ल साहब के ज़माने का है। न जाने कौन सी लकड़ी है कि अब तक दीमक न लगी।

इमामबाड़ा शिया सेंट्रल वक़्फ़ बोर्ड की निगरानी में है। किराएदार भी इसके मुहाफ़िज़ हैं। बाक़ाएदा मजलिसें होती हैं। कुछ बरसों से आग का मातम भी होता है।

11- इमामबाड़ा आग़ा बाक़र ख़ाँ

यह इमामबाड़ा चौक की सब्ज़ी मण्डी के पूरब में है। इसे नवाब शुजाउद्दौला के ज़माने में (1756ई०-1775ई०) आग़ा इस्माईल दिलावरजंग की ख़्वाहिश पर उनके चचा और कार्यपाल आग़ा बाक़र ख़ाँ ने बनवाया था। आग़ा बाक़र नवाब शुजाउद्दौला की फ़ौज में पाँच हज़ार सवारों के रिसालदार थे। उस समय यह लखनऊ का दूसरा इमामबाड़ा था। पहला इमामबाड़ा अबूतालिब ख़ाँ ने बनवाया था, लेकिन अब वह मौजूद नहीं है।

1858ई॰ में जब अंग्रेज़ों ने इमामबाड़ा आसफ़ुद्दौला को फ़ौजी छावनी बना कर आसपास की सारी इमारतें गिरवा दीं तो यह इमामबाड़ा भी शहीद हो गया। यहाँ मिर्ज़ा काम बख़्श (सुपुत्र सुलैमान शिकोह सुपुत्र द्वितीय हज़रत शाह आलम द्वितीय, बादशाह देहली) की क़ब्र थी। इसीलिए उनके बेटे मिर्ज़ा हैदर शिकोह ने 1859ई॰ में ज़मीन को छुड़ाकर दोबारा इमामबाड़ा बनवाया। अब वह बाक़ी नहीं है। इस निर्माण की शुरुआत 1971ई॰ से हुई और यह सिलसिला अब तक चल रहा है।

इमामबाड़े के दो हिस्से हैंः सामने मर्दों के लिए, पीछे औरतों के लिए। आगे-पीछे सहन और आसपास चारदीवारी है। इमामबाड़े की ख़ूबसूरती ज़रीह के अलावा एक ख़ास बनावट का अलम है जो ज़मीन खोदने पर निकला था। इमामबाड़े के अंदर और बाहर (आंगन में) जगह-जगह क़ब्रें हैं।

यह इमामबाड़ा पुराने ज़माने से मक़बूले ख़ास व आम में लोकप्रिय है। हर जुमेरात को अक़ीदतमंदों (श्रद्धालुओं) का तांता बंधा रहता है। शाम को हज़ारों की भीड़ होती है। हदीसे किसा की तिलावत और हज़रत अली की शान में मुनाजात होती है। रात के 12 बजे तक आने वालों गिनती घटकर सौ-सवा सौ रह जाती है।

(मुतवल्लीः किश्वर जहाँ साहेबा, पत्नी यूसुफ़ अख़्तर साहब)

12- इमामबाड़ा ग़ुफ़रानमआब

यह इमामबाड़ा चौक की सब्ज़ी मण्डी के पूरब में है। (आग़ा बाक़र का इमामबाड़ा इसी से कुछ क़दम पहले बायीं तरफ़ है) इसके सामने से विक्टोरिया स्ट्रीट गुज़रती है और पीछे की तरफ कैनिंग स्ट्रीट है। सड़क (विक्टोरिया स्ट्रीट) से सीधा रास्ता गया है। सब्ज़ी से लदे छकड़ों और ट्रकों की वजह से गंदा रास्ता पार करने में मुश्किल होती है।

यह इमामबाड़ा 1227हि॰ (मुताबिक़ 1812ई॰) में मौलाना सैय्यद दिलदार अली साहब ने बनवाया था जो हिन्दुस्तान में इमामिया मज़हब के पहले मुजतहिद थे। ग़ुफ़रानमआब लक़ब (उपाधि) इंतेक़ाल के बाद हुआ।

इमामबाड़े के दायीं तरफ़ एक कमरे में इमामबाड़े के संस्थापक की बीवी और उनके छोटे बेटे सैयदुल उलमा सैयद हुसैन मुजतहिद की क़ब्रें हैं। (वफ़ात 18 अक्टूबर 1856ई॰ वाजिद अली शाह का राजकाल, वफ़ात के बाद का लक़ब (उपाधि) इल-लिय्यीन मकान) इनके अलावा एक चौथी क़ब्र है जिसके मज़ार के पत्थर पर लिखा है "मज़ारे अक़दसे क़ुदवतुल उलमा, बानिए शिया कांफ्रेंस" क़ब्रों पर संगे मरमर के तख़्ते लगे हैं जिनमें काट कर ख़ूबसूरत मेहराबें बनाई गई हैं। हौज़ (गहरे हिस्से) में कतबे हैं। इमामबाड़े के बानी की क़ब्र पर लिखा है "मज़ारे मोहतरम मुजद्दिदे शरीअत हज़रत ग़ुफ़रानमआब ताबा सराह" इनके बेटे सैयदुल उलमा की क़ब्र का पत्थर सबसे बड़ा है। शायद इतना बड़ा संगे मरमर का तख़्ता किसी दूसरी क़ब्र पर कहीं नहीं है। कहा जाता है कि यह ईरान से लाया गया था। इमामबाड़े के दाईं तरफ़ ग़ुफ़रानमआब के बड़े बेटे सुलतानुल उलमा सैय्यद मोहम्मद साहब मुजतहिद की बनवाई हुई शानदार मस्जिद है (निर्माण का सालः 1239हि॰/1823ई॰ सुल्तानुल उलमा ने 22 रबीउल अव्वल 1284ई॰/1868ई॰) को रेहलत की और इमामबाड़े के ज़रीह वाले दालान में दफ़न हुए।

इमामबाड़े की इस वक़्त दिखने वाली इमारत नई है। (इस) निर्माण का सिलसिला सन 1954-55ई॰ से शुरु हुआ और अब तक चल रहा है।

इमामबाड़े में सामने की तरफ़ पाँच दर हैं जिनके दरवाज़े लकड़ी के हैं। इमारत के दोनों तरफ़ बरामदे हैं और उनके पीछे कमरे हैं। जिनमें चार-चार दर हैं (4+5+4) छत पर दोनों तरफ़ ख़ूबसूरत गुम्बद हैं। इमारत का रंग बाहर की तरफ़ ज़र्द है। ख़ुशनुमा रंग मेनगेट का भी है।

इमामबाड़े में दाख़िल होने से पहले दो दालान (या कमरे) नज़र आते हैं जिनका फ़र्श बहुत ही ख़ुशनुमा (Mosaic) का है। सिर्फ़ एक क़ब्र कच्ची है (पक्के फ़र्श के नीचे भी क़ब्रें हैं) दोनों दालान पार करने के बाद शह-नशीन के दरमियानी दर में इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम की ज़रीह की ज़ियारत होती है। इस दर का दरवाज़ा और आस-पास की खिड़कियाँ लोहे की हैं जिनका रंग

हरा है। शह-नशीन से मिली हुई दालान में बायीं तरफ़ का मिंबर नज़र आता है।

दोनों दालानों के पहलुओं में दो मंज़िला सहनचियाँ हैं। शह-नशीन से मिली हुई दालान की सहनचियों में ऊपर नीचे तीन-तीन दर हैं और इसके बाद वाले (अगले) दालान की सहनचियों में ऊपर-नीचे दो-दो दर हैं।(2+3=5)

इमामबाड़े के सामने कच्चा मैदान है जिसमें जगह-जगह मेनगेट तक क़ब्रें नज़र आती हैं। सहन के दो हिस्से हैंः इमामबाड़े से मिला हुआ ख़ास वक़्फ़ है जो ख़ानदान के लिए ख़ास है। इसके आगे आम वक़्फ़ है। क़ब्रों के कतबे (लेख) पढ़कर इबरत होती है। न जाने कितने उलमा, शायर और बड़े अदीब (साहित्यकार) यहाँ दफ़न हैं। ''लेखक हुसैनी शायर 'फ़ज़्ल' नक़वी (तारीख़े वफ़ात 14 मई 1991ई०) के मज़ार पर यह शेर लिखा है-

जिंदगी चंद दिन की रानाई
फिर हज़ारों बरस की तन्हाई

भला इसे कौन भुला सकता है।

इमामबाड़ा गुफ़रानमआब का नाम ''शामे ग़रीबाँ'' की मजलिस की वजह से सारी दुनिया में मशहूर है। यह मजलिस बरोज़ अशरा (10 मोहर्रम) रात के अंधेरे में खुले मैदान में होती है जिसके लिए मिंबर अंदर से बाहर लाकर रखा जाता है। हर साल अनगिनत लोग रेडियो पर इस मजलिस को सुनते हैं। बयान इतना प्रभावी होता है कि हर व्यक्ति बिना किसी मज़हब मिल्लत के भेदभाव के आँसू बहाने लगता है।

मुतवल्लियानः

मौलाना सैय्यद कल्बे हुसैन (मरहूम)

मौलाना सैय्यद कल्बे आबिद साहब (मरहूम)

मौजूदाः मौलाना कल्बे सादिक़ साहब, मौलाना कल्बे जवाद साहब

मुन्तज़िम मजालिसः सैय्यद शम्सुल हसन 'ताज' (शम्सी साहब)

13- जन्नत की खिड़की

चौक की सब्ज़ी मण्डी के पूरब में इमामबाड़ा गुफ़रानमआब से कुछ क़दम पहले दायीं तरफ़ एक सफ़ेद दो मंज़िला इमारत है जिसके हरे फाटक के दायीं तरफ़ दीवार पर एक गोले में ''हसन मंज़िल'' और बायीं तरफ दीवार पर दूसरे गोले में ''हुसैन मंज़िल'' लिखा है। यही इमारत ''जन्नत की खिड़की'' है। इसे हकीम सैयद यूसुफ़ हुसैन ने 1915ई० में बनवाया था।

यह इमामबाड़े के अलावा मकान भी है जिसमें वारिस रहते हैं। इसकी इमारत में ख़ास बात यह है कि लकड़ी का कहीं भी इस्तेमाल नहीं हुआ है। सब दरवाज़े लोहे के हैं।

मेनगेट के बाद ड्योढ़ी और उसके दोनों तरफ़ कोठरियाँ हैं। ड्योढ़ी के बाद पक्का आंगन है। इसके सामने दालान और फिर शह-नशीन जिसकी शोभा पुराने ज़माने की एक ज़रीह है। दालान के दायीं तरफ़ तीन मंज़िला मस्जिद है और बाईं तरफ़ दो मंज़िला सहनची।

आंगन के दाईं तरफ़ उस दालान से मिला हुआ गुस्लख़ाना और फिर एक कमरा है। आंगने के बायीं तरफ़ बरामदे में बावर्चीख़ाना है। घर के बाहर बायीं तरफ़ दुकानें हैं।

चालीस मिंबर होना इस इमामबाड़ी की ख़ास बात है। यहाँ 9 मोहर्रम की रात में चालीस छोटे-छोटे मिंबर सजाए जाते हैं ज़रूरतमंद आते हैं, मन्नतें माँगते हैं और मुराद पूरी होने पर चालीस मिंबरों पर मिठाई चढ़ाकर रसूले ख़ुदा की नज़र दिलवाते हैं।

14- इमाम बाड़ा सैयद तक़ी साहब

यह इमामबाड़ा चौक में मस्जिद तहसीन अली ख़ाँ के पीछ है। रास्ता मस्जिद के दोनों तरफ़ गलियों से होकर है। तीसरा रास्ता अब्दुल अज़ीज़ रोड (मौलाना अली नक़ी रोड) से है।

इमामबाड़े की इमारत में सामने की तरफ़ पाँच ऊँचे-ऊँचे दर हैं जिनमें लोहे के हरे दरवाज़े लगे हैं। बीच वाले दर के ऊपर संगे मरमर की एक तख़्ती पर यह इबारत लिखी हैः-

हुसैनिया हज़रत जन्नत मआब ताबा सराह

ज़ेरे नज़र मरम्मत व तामीर

सरपरस्ती जनाब सदरुल उलमा मौलाना सैय्यद बाक़िर साहब क़िब्ला

मुतवल्ली वक़्फ़ हाज़ा

1402हि०

इस से ज़ाहिर होता है 1981ई० में पुरानी इमारत की मरम्मत हुई। लोहे के दरवाज़े हिफ़ाज़त के ख़याल से लगाए गए हैं। पहले दरों में जगह-जगह जोड़ियों के पुरानी बनावट के लकड़ी के खड़े तख़्ते लगे थे जो ज़रूरत के वक़्त हटा दिए जाते थे।

इमामबाड़े के दाईं तरफ "दानिशगाहे मुम्ताज़ुल उलमा" (मदरसा) और "कुतुबख़ाना मुम्ताज़ुल उलमा" हैं। इस कुतुबख़ाने में क़लमी किताबों का बेजोड़ ज़ख़ीरा है जो औलाद पर वक़्फ़ है।

इस इमामबाड़े को मुम्ताज़ुल उलमा फ़ख़्रुल मुदर्रिसीन सैय्यद मोहम्मद तक़ी साहब ने बनवाया था। 8 जुलाई 1868ई० को संगे बुनियाद रखा। फरवरी 1871ई० में बनकर तैयार हुआ।

इसके बानी सैयदुल उलमा मोलवी सैयद हुसैन साहब के बेटे और मोलवी सैय्यद दिलदार अली साहब गुफ़रानमआब के पोते थे। मुम्ताज़ुल उलमा और फ़ख़्रुल मुदर्रिसीन के ख़िताब (उपाधि) हज़रत अमजद अली शाह (राजकाल 1842ई०-1847ई०) ने दिए थे। वफात के बाद (26 नवम्बर 1872ई०) "जन्नत मआब" लक़ब हुआ। क़ब्र इमामबाड़े के बीच वाले दालान से मिली हुई सहनची में है। पैंतियानी आपके बड़े बेटे और जानशीन (उत्तराधिकारी) शम्सुल उलमा सै० मोहम्मद इब्राहीम साहब मुजतहिद का मज़ार है। (वफ़ात 12 जनवरी 1890ई०)

शह-नशीन की शोभा करबला-ए-मोअ़ल्ला की एक ज़रीह है। जो मुम्ताज़ुल उलमा के ज़माने में इराक़ से आई थी। ज़रीह के सामने वाले दर (बारगाहे हुसैनी) में लकड़ी की ख़ूबसूरत जाली लगी है। शह-नशीन के सामने तीन चौड़े दालान हैं जिनमें से हर एक में पाँच-पाँच दर हैं। अगले दो दालानों के दोनों तरफ़ दो मंज़िला सहनचियाँ हैं जिनमें से हर एक में ऊपर-नीचे तीन-तीन दर हैं। (कुछ दर बंद कर दिए गए हैं) दालानों की पुरानी छतें लकड़ी के लट्ठों और धन्नियों की बनी थीं। अब उनकी जगह स्लेब (Slab) ने ले ली है।

इमामबाड़े के सामने एक चौड़ा आंगन (कच्चा मैदान) है। जब मजलिस में आने वालों को अंदर जगह नहीं मिलती तो वह बाहर मैदान में दरियों पर शामियाने के नीचे बैठते हैं।

इस इमामबाड़े के बारे में आग़ा महदी साहब, लेखक तारीख़े लखनऊ (कराची 1976ई०) की यह राए है "यह इमामबाड़ा, इमामबाड़ा आसिफ़ी, इमामबाड़ा झाउलाल, इमामबाड़ा मल्का ज़मानी के बाद चौथे नम्बर पर है। और इस से बड़ा कोई अज़ाख़ाना नहीं है।" (पेज-84)

इमामबाड़े के कुछ दूर दायीं तरफ़ एक छोटी सी इमारत है जिस पर लिखा है "आराम गाहे सैयिदुल उलमा" यहाँ ख़ानदान के लोग दफ़्न हैं जिनके नाम यह हैं: (1) जनाब मौलाना सैयद अबुल हसन साहब सैय्यद अली नक़ी साहब के वालिद (2) सैयिदुल उलमा मौलाना सैयद अली नक़ी साहब उर्फ़ नक़्क़न साहब (3) मौलाना सैयद अबुल हसन साहब की बीवी (4) दुख़्तर सैय्यद अली नक़ी साहब।

आरामगाहे सैयिदुल उलमा से मिली हुई एक पुरानी मस्जिद भी है जिसकी पूरी मरम्मत मौलाना सैय्यद बाक़र साहब क़िब्ला ने कराई है। इस इमामबाड़े के इस वक़्त मुतवल्ली मौलाना सैय्यद बाक़िर साहब क़िब्ला, मौलाना सैय्यद अली नक़ी के छोटे भाई हैं।

हाशिये

(1) सैयद आग़ा महदी, तारीख़े लखनऊ (कराची, 1976ई०) भाग एक, पेज-307

(2) शेख़ तसद्दुक़ हुसैन, बेगमाते अवध (किताब नगर लखनऊ), पेज-142

(3) शेख़ तसद्दुक़ हुसैन, लखनऊ के दो तारीख़ी इमामबाड़े, 'इस्तेक़लाल', लखनऊ 23 अगस्त 1951ई०, पेज-6

(4) सैयद आग़ा महदी, तारीख़े लखनऊ (कराची, 1976ई०) भाग-1, पेज-123

[उर्दू मासिक "नया दौर" अवध नम्बर फ़रवरी-मार्च 1994ई० से साभार]